[2019] 3 उम. नि. प. 70

अशर्फी देवी (मृत) विधिक प्रतिनिधियों की मार्फत

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य

1 फरवरी, 2019

न्यायमूर्ति अभय मनोहर सप्रे और न्यायमूर्ति दिनेश महेश्वरी

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 136 [सपठित सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 का आदेश 47, नियम 1] – पुनर्विलोकन आदेश के विरुद्ध अपील – उच्च न्यायालय द्वारा पुनर्विलोकन आवेदन को इस आधार पर खारिज करना कि मुख्य आदेश को देखने से ही कोई भूल प्रकट नहीं होती है – पुनर्विलोकन आदेश से उद्भूत होने वाली किसी अपील में मुख्य आदेश की वैधता और शुद्धता की परीक्षा नहीं की जा सकती है ।

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 142 – असाधारण अधिकारिता – पुनर्विलोकन आदेश के विरुद्ध विशेष इजाजत लेकर अपील फाइल किया जाना – जब अपीलार्थी ने मुख्य आदेश के विरुद्ध पिछले 11 वर्षों तक विशेष इजाजत याचिका न फाइल करने के संबंध में न तो कोई कारण दिया हो और न ही पुनर्विलोकन आदेश के विरुद्ध विशेष इजाजत याचिका फाइल करते समय भी मुख्य आदेश को चुनौती दी हो तब अपीलार्थी को मुख्य आदेश को चुनौती देने के लिए अनुज्ञात करने हेतु अनुच्छेद 142 के अधीन उच्चतम न्यायालय की शक्ति का अवलंब नहीं लिया जा सकता है ।

इस मामले में अपीलार्थी मूल अपीलार्थी के विधिक प्रतिनिधि हैं, जो कि रिट याची और पुनर्विलोकन याची थी जबकि इस मामले में प्रत्यर्थी, रिट याचिका और पुनर्विलोकन आवेदन में प्रत्यर्थी थे । मूल अपीलार्थी कतिपय भूमियों की स्वामिनी थी । ये भूमियां नगर भूमि (अधिकतम सीमा और विनियमन) अधिनियम, 1976 के अधीन आने वाली अधिकतम सीमा कार्यवाहियों के अध्यधीन थीं । अंततोगत्वा, अधिकतम सीमा कार्यवाहियों के परिणामस्वरूप कुछ भूमियों को फालतू भूमि के रूप में अधिकतम सीमा से अधिक घोषित किया गया । ऐसा दावा किया

गया है कि राज्य ने फालतू भूमि को बहुत पहले वर्ष 1982 में कब्ज़े में ले लिया था । अधिकतम सीमा अधिनियम को उत्तर प्रदेश राज्य के लिए तारीख 22 मार्च, 1999 को निरसित कर दिया गया था । वर्ष 2002 में, मूल अपीलार्थी ने प्रत्यर्थियों-उत्तर प्रदेश राज्य और उसके प्राधिकारियों के विरुद्ध यह दावा करते हुए इलाहाबाद उच्च न्यायालय में रिट याचिका फाइल की कि चूंकि निरसन अधिनियम के प्रवृत्त होने के पश्चात् भी फालतू भूमि पर मूल अपीलार्थी का कब्ज़ा बना रहा था इसलिए प्रश्नगत भूमियों के संबंध में उसके विरुद्ध समस्त अधिकतम सीमा कार्यवाहियां निरसन अधिनियम के निबंधनों के अनुसार व्यपगत हो गई थीं । यह रिट याचिका तारीख 14 मार्च, 2008 के आदेश द्वारा खारिज कर दी गई थी । मूल अपीलार्थी (रिट याची) अपनी रिट याचिका के खारिज किए जाने से व्यथित था और उसने उच्च न्यायालय में 2008 का पुनर्विलोकन आवेदन सं. 81507 फाइल किया । उच्च न्यायालय के तारीख 16 दिसम्बर, 2008 के आक्षेपित आदेश द्वारा पुनर्विलोकन आवेदन खारिज कर दिया । मूल अपीलार्थी ने इससे व्यथित होकर तारीख 16 दिसम्बर, 2008 के पुनर्विलोकन आदेश के विरुद्ध विशेष इजाजत लेकर प्रस्तुत अपील फाइल की है । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – अपीलार्थी ने इस बारे में कोई कारण नहीं दिया था कि पिछले लगभग 11 वर्षों में मुख्य आदेश के विरुद्ध विशेष इजाजत याचिका न फाइल करने के लिए उसे किसने निवारित किया था । द्वितीयतः, जैसे ही तारीख 14 मार्च, 2008 वाला मुख्य आदेश पारित किया गया था, इस न्यायालय में विशेष इजाजत याचिका फाइल करने संबंधी अपीलार्थियों के अधिकार के मार्ग में कोई विधिक अड़चन नहीं थी और अंततः, जब वर्ष 2010 में पुनर्विलोकन आदेश के विरुद्ध प्रस्तुत विशेष इजाजत याचिका फाइल की गई थी तब भी मूल अपीलार्थी ने तारीख 14 मार्च, 2008 के मुख्य आदेश को चुनौती नहीं दी थी । इन तीन कारणों को ध्यान में रखते हुए, संविधान के अनुच्छेद 142 के अधीन असाधारण शक्तियों का अवलंब लेने और अपीलार्थियों (मूल अपीलार्थी के विधिक प्रतिनिधियों) को इस अपील में तारीख 14 मार्च,

2008 के मुख्य आदेश की वैधता को प्रश्नगत करने के लिए अनुज्ञात करने का कोई उचित आधार प्रतीत नहीं होता है । (पैरा 13,14 और 15)

यह स्थापित विधि है कि प्रत्येक त्रुटि को, चाहे वह तथ्यात्मक हो या विधिक, संहिता के आदेश 47, नियम 1 के अधीन पुनर्विलोकन की विषयवस्तु नहीं बनाया जा सकता है हालांकि उसे ऐसे आदेश से उद्भूत होने वाली अपील की विषयवस्तु बनाया जा सकता है । दूसरे शब्दों में, संहिता के आदेश 47, नियम 1 के उपबंधों को लागू करने की दृष्टि से त्रुटि/गलती अभिलेख को देखने से ही अवश्य प्रकट होनी चाहिए । प्रथमतः, यह अपील मुख्य आदेश से उद्भूत नहीं होती है किन्तु केवल पुनर्विलोकन आदेश से उद्भूत होती है और इसलिए इस अपील में अपील न्यायालय के रूप में मुख्य आदेश की वैधता और शुद्धता की परीक्षा नहीं की जा सकती है । द्वितीयतः, इस मामले की परीक्षा यह पता लगाने की दृष्टि से की गई है कि क्या उच्च न्यायालय का पुनर्विलोकन आवेदन को खारिज करना सही था और यह अभिनिर्धारित करते हुए तारीख 14 मार्च, 2008 के मुख्य आदेश को कायम रखना न्यायोचित था कि उसमें अभिलेख को देखने मात्र से कोई त्रुटि/गलती प्रकट नहीं होती थी । तृतीयतः, परीक्षा करने पर पुनर्विलोकन आदेश संहिता के आदेश 47, नियम 1 की अपेक्षाओं के अनुरूप पारित किया गया था और इसलिए उच्च न्यायालय ने ठीक ही यह निष्कर्ष निकाला है कि पुनर्विलोकन आवेदन में आक्षेपित किए गए मुख्य आदेश में संहिता के आदेश 47 के अर्थान्तर्गत कोई तथ्यात्मक और/या विधिक त्रुटि (त्रुटियां) नहीं थीं जिससे कि पुनर्विलोकन न्यायालय अपनी पुनर्विलोकन अधिकारिता में उसे वापस मंगाने का हकदार होता । अंततः, जब रिट याचिका में उच्च न्यायालय द्वारा यह निष्कर्ष अभिलिखित कर दिया गया था कि रिट याची (मूल अपीलार्थी) निरसन की तारीख को प्रश्नगत भूमि पर अपना वास्तविक कब्ज़ा साबित करने में असफल रहा है, तब उसी न्यायालय द्वारा ऐसे निष्कर्ष की तथ्यों और साक्ष्य के आधार पर अपील न्यायालय के रूप में पुनर्विलोकन अधिकारिता में नए सिरे से परीक्षा नहीं की जा सकती थी । (पैरा 21, 23, 24, 26 और 27)

सिविल अपीली अधिकारिता : 2010 की सिविल अपील सं. 5217.

2002 की सिविल प्रकीर्ण रिट याचिका सं. 10557 में 2008 के सिविल प्रकीर्ण पुनर्विलोकन आवेदन सं. 81507 में इलाहाबाद उच्च न्यायालय के तारीख 16 दिसम्बर, 2008 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से — सर्वश्री जयंत भूषण, ज्येष्ठ अधिवक्ता, भारत भूषण और तुषार भूषण

प्रत्यर्थियों की ओर से — सर्वश्री डा. एम. पी. राजू, जॉन थॉमस, पी. जार्ज गिरी, (सुश्री) जेसमिन कुरियन, टी. एन. सिंह, राजीव कुमार दूबे, कमलेन्द्र मिश्रा, भक्ति वर्धन सिंह, संजय कुमार विसेन, नवीन गुप्ता, (सुश्री) सस्मिता त्रिपाठी और (सुश्री) रितु रस्तोगी

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति अभय मनोहर सप्रे ने दिया ।

न्या. सप्रे – यह अपील 2002 की सिविल प्रकीर्ण रिट याचिका सं. 10557 में 2008 के सिविल प्रकीर्ण पुनर्विलोकन आवेदन सं. 81507 में इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा पारित तारीख 16 दिसम्बर, 2008 के उस अंतिम निर्णय और आदेश के विरुद्ध फाइल की गई है जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने इस मामले में मूल अपीलार्थी द्वारा फाइल किया गया सिविल प्रकीर्ण पुनर्विलोकन आवेदन खारिज कर दिया था ।

2. इस अपील में अंतर्वलित संक्षिप्त संविवाद का मूल्यांकन करने की दृष्टि से कुछ तथ्यों का नीचे उल्लेख करना आवश्यक है ।

3. इस मामले में अपीलार्थी मूल अपीलार्थी के विधिक प्रतिनिधि हैं, जो कि रिट याची और पुनर्विलोकन याची थी जबकि इस मामले में प्रत्यर्थी, रिट याचिका और पुनर्विलोकन आवेदन में प्रत्यर्थी थे ।

4. मूल अपीलार्थी कतिपय भूमियों की स्वामिनी थी । ये भूमियां नगर भूमि (अधिकतम सीमा और विनियमन) अधिनियम, 1976 के अधीन आने वाली अधिकतम सीमा कार्यवाहियों के अध्यधीन थीं ।

अंततोगत्वा, अधिकतम सीमा कार्यवाहियों के परिणामस्वरूप कुछ भूमियों को फालतू भूमि के रूप में अधिकतम सीमा से अधिक घोषित किया गया । ऐसा दावा किया गया है कि राज्य ने फालतू भूमि को बहुत पहले वर्ष 1982 में कब्ज़े में ले लिया था । अधिकतम सीमा अधिनियम को उत्तर प्रदेश राज्य के लिए तारीख 22 मार्च, 1999 को निरसित कर दिया गया था ।

5. वर्ष 2002 में, मूल अपीलार्थी ने प्रत्यर्थियों-उत्तर प्रदेश राज्य और उसके प्राधिकारियों के विरुद्ध यह दावा करते हुए इलाहाबाद उच्च न्यायालय में रिट याचिका फाइल की कि चूंकि निरसन अधिनियम के प्रवृत्त होने के पश्चात् भी फालतू भूमि पर मूल अपीलार्थी का कब्ज़ा बना रहा था इसलिए प्रश्नगत भूमियों के संबंध में उसके विरुद्ध समस्त अधिकतम सीमा कार्यवाहियां निरसन अधिनियम के निबंधनों के अनुसार व्यपगत हो गई थीं ।

6. यह रिट याचिका तारीख 14 मार्च, 2008 के आदेश द्वारा खारिज कर दी गई थी । मूल अपीलार्थी (रिट याची) अपनी रिट याचिका के खारिज किए जाने से व्यथित था और उसने उच्च न्यायालय में 2008 का पुनर्विलोकन आवेदन सं. 81507 फाइल किया । उच्च न्यायालय के तारीख 16 दिसम्बर, 2008 के आक्षेपित आदेश द्वारा पुनर्विलोकन आवेदन खारिज कर दिया ।

7. मूल अपीलार्थी इससे व्यथित हुआ और उसने तारीख 16 दिसम्बर, 2008 के पुनर्विलोकन आदेश के विरुद्ध विशेष इजाजत लेकर प्रस्तुत अपील फाइल की है ।

8. अपीलार्थियों की ओर से विद्वान् ज्येष्ठ काउन्सेल श्री जयंत भूषण और प्रत्यर्थियों की ओर से विद्वान् काउन्सेल डा. एम. पी. राजू की सुनवाई की गई ।

9. अभिलेख से यह स्पष्ट होता है कि मूल अपीलार्थी (रिट याची) ने रिट याचिका (2002 की 10557) में पारित तारीख 14 मार्च, 2008 के मुख्य आदेश की वैधता और शुद्धता को कभी भी चुनौती नहीं दी

किन्तु अपनी चुनौती को पुनर्विलोकन आवेदन में पारित तारीख 16 दिसम्बर, 2008 के आदेश तक ही सीमित रखा ।

10. यद्यपि अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउन्सेल ने यह दलील दी कि इस अपील में तारीखों की सूची को पढ़ने से यह दर्शित होता है कि मूल अपीलार्थी ने तारीख 16 दिसम्बर, 2008 के पुनर्विलोकन आदेश के साथ-साथ तारीख 14 मार्च, 2008 के मुख्य आदेश को भी चुनौती दी है किन्तु हम ऐसा नहीं पाते हैं ।

11. हमारी राय में, चूंकि मूल अपीलार्थी ने तारीख 14 मार्च, 2008 के मुख्य आदेश को किसी पृथक् विशेष इजाजत याचिका में या इस अपील में चुनौती नहीं दी है, इसलिए इस न्यायालय से प्रस्तुत अपील में तारीख 14 मार्च, 2008 के मुख्य आदेश की वैधता और शुद्धता की परीक्षा करने की अपेक्षा नहीं है ।

12. तथापि, अपीलार्थियों की ओर से विद्वान् ज्येष्ठ काउन्सेल श्री जयंत भूषण ने यह दलील दी है कि इस न्यायालय को संविधान के अनुच्छेद 142 के अधीन अपनी शक्तियों का अवलंब लेना चाहिए और अपीलार्थियों को मुख्य आदेश को चुनौती देने के लिए अनुज्ञात करना चाहिए । हमें इस निवेदन में तीन कारणों से कोई सार प्रतीत नहीं होता है ।

13. प्रथमतः, अपीलार्थी ने इस बारे में कोई कारण नहीं दिया था कि पिछले लगभग 11 वर्षों में मुख्य आदेश के विरुद्ध विशेष इजाजत याचिका न फाइल करने के लिए उसे किसने निवारित किया था ।

14. द्वितीयतः, जैसे ही तारीख 14 मार्च, 2008 वाला मुख्य आदेश पारित किया गया था, इस न्यायालय में विशेष इजाजत याचिका फाइल करने संबंधी अपीलार्थियों के अधिकार के मार्ग में कोई विधिक अड़चन नहीं थी और अंततः, जब वर्ष 2010 में पुनर्विलोकन आदेश के विरुद्ध प्रस्तुत विशेष इजाजत याचिका फाइल की गई थी तब भी मूल अपीलार्थी ने तारीख 14 मार्च, 2008 के मुख्य आदेश को चुनौती नहीं दी थी ।

15. इन तीन कारणों को ध्यान में रखते हुए, हमें संविधान के

अनुच्छेद 142 के अधीन असाधारण शक्तियों का अवलंब लेने और अपीलार्थियों (मूल अपीलार्थी के विधिक प्रतिनिधियों) को इस अपील में तारीख 14 मार्च, 2008 के मुख्य आदेश की वैधता को प्रश्नगत करने के लिए अनुज्ञात करने का कोई उचित आधार प्रतीत नहीं होता है ।

16. अब मामले के गुणागुण पर विचार करते हुए हमें इस प्रश्न की परीक्षा करनी होगी कि क्या उच्च न्यायालय का मूल अपीलार्थी द्वारा फाइल किए गए पुनर्विलोकन आवेदन को यह अभिनिर्धारित करते हुए खारिज करना सही था कि सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "संहिता" कहा गया है) के आदेश 47, नियम 1 के अर्थान्तर्गत तारीख 14 मार्च, 2008 के मुख्य आदेश में उसे देखने से ही प्रकट होने वाली कोई त्रुटि नहीं है ।

17. पक्षकारों के विद्वान् काउन्सेलों की सुनवाई करने और मामले के अभिलेख का परिशीलन करने के पश्चात्, हम इस अपील में कोई सार नहीं पाते हैं ।

18. हम पुनर्विलोकन आदेश की वैधता की परीक्षा करते समय तारीख 14 मार्च, 2008 के मुख्य आदेश की वैधता की गुणागुण के आधार पर परीक्षा नहीं कर सकते हैं क्योंकि जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, यह अपील मुख्य आदेश से उद्भूत नहीं हुई है । अतः, हमें अपनी जांच को इस बात का पता लगाने तक सीमित रखना होगा कि पुनर्विलोकन आदेश वैध रूप से संधार्य है अथवा नहीं ।

19. हम तारीख 14 मार्च, 2008 के मुख्य आदेश का परिशीलन करने पर यह पाते हैं कि उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करते हुए रिट याचिका खारिज कर दी थी कि रिट याची (इस मामले में मूल अपीलार्थी) निरसन की तारीख को प्रश्नगत भूमि पर अपना कब्ज़ा साबित करने में असफल रहा । यह अभिनिर्धारित किया गया था कि राज्य द्वारा तैयार किए गए पंचनामे के अनुसार राज्य ने वर्ष 1982 में भूमि का कब्ज़ा ग्रहण कर लिया था ।

20. उच्च न्यायालय ने, पुनर्विलोकन में यह अभिनिर्धारित किया कि मुख्य आदेश में ऊपर उल्लिखित निष्कर्ष अभिलिखित करते समय

संहिता के आदेश 47, नियम 1 के अर्थान्तर्गत तथ्य या विधि संबंधी कोई प्रत्यक्ष त्रुटि कारित नहीं की गई थी जिससे कि संहिता के आदेश 47, नियम 1 की कठोरता लागू होती हो ।

21. यह स्थापित विधि है कि प्रत्येक त्रुटि को, चाहे वह तथ्यात्मक हो या विधिक, संहिता के आदेश 47, नियम 1 के अधीन पुनर्विलोकन की विषयवस्तु नहीं बनाया जा सकता है हालांकि उसे ऐसे आदेश से उद्भूत होने वाली अपील की विषयवस्तु बनाया जा सकता है । दूसरे शब्दों में, संहिता के आदेश 47, नियम 1 के उपबंधों को लागू करने की दृष्टि से त्रुटि/गलती अभिलेख को देखने से ही अवश्य प्रकट होनी चाहिए ।

22. इसके बाद, अपीलार्थियों की ओर से विद्वान् काउन्सेल ने अपील में इस प्रकार बहस की मानो यह अपील तारीख 14 मार्च, 2008 के मुख्य आदेश से उद्भूत हुई हो । उसने अभिवचनों और अनेक दस्तावेज़ों के प्रति विस्तारपूर्वक निर्देश किया मानो हमसे स्वयं मुख्य आदेश की वैधता की परीक्षा करने की अपेक्षा की गई है ।

23. हमें उसके किसी भी निवेदन में एक से अधिक कारणों से कोई सार प्रतीत नहीं होता है । प्रथमतः, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, यह अपील मुख्य आदेश से उद्भूत नहीं होती है किन्तु केवल पुनर्विलोकन आदेश से उद्भूत होती है और इसलिए हम इस अपील में अपील न्यायालय के रूप में मुख्य आदेश की वैधता और शुद्धता की परीक्षा नहीं कर सकते हैं ।

24. द्वितीयतः, हमने इस मामले की परीक्षा यह पता लगाने की दृष्टि से की है कि क्या उच्च न्यायालय का पुनर्विलोकन आवेदन को खारिज करना सही था और यह अभिनिर्धारित करते हुए तारीख 14 मार्च, 2008 के मुख्य आदेश को कायम रखना न्यायोचित था कि उसमें अभिलेख को देखने मात्र से कोई त्रुटि/गलती प्रकट नहीं होती थी ।

25. दूसरे शब्दों में, हमने इस मुद्दे की केवल इस बात का पता लगाने की दृष्टि से परीक्षा की है कि पुनर्विलोकन आदेश, जो कि इस अपील की विषयवस्तु है, संहिता के आदेश 47, नियम 1 की अपेक्षाओं के अनुरूप पारित किया गया था अथवा नहीं ।

26. तृतीयतः, परीक्षा करने पर हमारा यह मत है कि पुनर्विलोकन आदेश संहिता के आदेश 47, नियम 1 की अपेक्षाओं के अनुरूप पारित किया गया था और इसलिए उच्च न्यायालय ने ठीक ही यह निष्कर्ष निकाला है कि पुनर्विलोकन आवेदन में आक्षेपित किए गए मुख्य आदेश में संहिता के आदेश 47 के अर्थान्तर्गत कोई तथ्यात्मक और/या विधिक त्रुटि (त्रुटियां) नहीं थीं जिससे कि पुनर्विलोकन न्यायालय अपनी पुनर्विलोकन अधिकारिता में उसे वापस मंगाने का हकदार होता ।

27. और अंततः, जब रिट याचिका में उच्च न्यायालय द्वारा यह निष्कर्ष अभिलिखित कर दिया गया था कि रिट याची (मूल अपीलार्थी) निरसन की तारीख को प्रश्नगत भूमि पर अपना वास्तविक कब्ज़ा साबित करने में असफल रहा है, तब उसी न्यायालय द्वारा ऐसे निष्कर्ष की तथ्यों और साक्ष्य के आधार पर अपील न्यायालय के रूप में पुनर्विलोकन अधिकारिता में नए सिरे से परीक्षा नहीं की जा सकती थी ।

28. पूर्वगामी विचार-विमर्श को ध्यान में रखते हुए, हम उच्च न्यायालय (पुनर्विलोकन न्यायालय) द्वारा आक्षेपित आदेश में दिए गए कारणों और निकाले गए निष्कर्ष से सहमत हैं और हमें इस अपील में कोई सार प्रतीत नहीं होता है ।

29. अतः, अपील असफल होती है और वह तदनुसार खारिज की जाती है ।

अपील खारिज की गई ।

ग्रो.